दशम् अध्याय

उपसंहार

उपसंहार

साहित्यकार के रूप में श्रीनरेश मेहता को प्रारंभिक पहचान सप्तक परम्परा में 'अज्ञेय' द्वारा संपादित 'दूसरा सप्तक' से मिली। यद्यपि कवि इससे पूर्व भी रचना कार्य करते रहें हैं और अपने अध्ययन काल में विभिन्न पत्रिकाओं एवं काव्य-गोष्ठियों में अपनी रचनाओं की प्रभावी प्रस्तुति करते रहे हैं तथापि 'दूसरा सप्तक' में संकलित कविताओं की प्रयोगधर्मिता ने विशेष आकर्षित किया। शनैः-शनैः कवि साहित्य-कर्म में रमते चले गए और अपने समय-समाज देशकाल को विभिन्न परिस्थितियों को रचनामनस् में अन्तर्भुक्त करते हुए एवं उनकी कलात्मक अभिव्यक्ति से हिन्दी-साहित्य को समृद्ध किया।

श्रीनरेश मेहता जिस युग में अपना रचनाकर्म कर रहे थे वह युग राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक दृष्टि से व्यापक परिवर्तन को अपने भीतर समेटे हुए है। युद्ध की विभीषिका एवं आर्थिक शोषण के चलते लघुमानव हाशिए पर पहुँच गया था। परिणाम स्वरूप समाज के आधारभूत स्तम्भों की नींव हिलने लगी और सम्पूर्ण मानवजाति के अस्तित्व पर प्रश्न चिह्न लग गया। सत्ता परिवर्तन के कारण आम जनता की आँखों में जगी आत्मसुरक्षा की चमक कोई सकारात्मक प्रभाव न दिखाई पड़ने के कारण पुनः धुंधली पड़ गई। वस्तुतः समाज की विद्रूपताएँ पुनः मुखर हो उठीं। संक्रमण के इस दौर में कवियों ने अपनी भूमिका का आदर्श रूप प्रस्तुत किया। उन्होंने जनसाधारण की आवाज को बुलंद करने हेतु उसे साहित्यिक अवलंबन प्रदान किया। श्रीनरेश मेहता का काव्य इस संदर्भ में विशेष आकर्षण का केंद्र रहा है। कवि द्वारा विरचित 'प्रवाद पर्व' एवं 'शबरी' में साधारण वर्ग के प्रतीक धोबी एवं दलित वर्ग की नेत्री शबरी इसका प्रमाण है कि वर्षों से उपेक्षा का शिकार यह वर्ग समाज की महत्त्वपूर्ण इकाई है। क्योंकि भारतीय जनमानस में भारतीय संस्कृति के पौराणिक पात्रों के प्रति विशेष आस्था एवं विश्वास रहा है, इसीलिए श्रीनरेश मेहता ने उन उदात्त चरित्रों की नवीन व्याख्या करते हुए साहित्य एवं समाज को नवीन दिशा प्रदान की है। 'प्रवाद पर्व', 'संशय की एक रात', एवं 'शबरी' में वर्णित राम एवं 'महाप्रस्थान' के युधिष्ठिर बीसवीं शती के समाज की विडम्बनाओं को लेकर चिंतित हैं। इनका चिंतन उत्तरआधुनिक युग की सूक्ष्म सरणियों पर आधारित है। कवि ने इन्हें जो लोकतांत्रिक स्वरूप प्रदान किया है, वह उनकी व्यापक एवं सूक्ष्म विश्लेषण-विवेचन शक्ति का परिचायक है। वस्तुतः उन्होंने अपनी काव्य रचनाओं में समाज की ग्रंथियों को तोड़ने के लिए आक्रामक प्रहार किए। सत्ता के द्वारा निजी स्वार्थों की सिद्धि के लिए सभ्य ढंग से होते राजनीतिक दुरुपयोग पर, अपने अहं की पूर्ति के लिए साधारण जनता को युद्ध की ज्वाला में झोंक देने की प्रवृत्ति पर एवं आधुनिक युग में मानसिक परिपक्वता की दुहाई देने वालों की वर्ग-भेद, रंग-भेद एवं जाति-भेद की दुर्भावना पर कवि ने करारे व्यंग्य किए हैं।

श्रीनरेश मेहता एक ऐसे मसिजीवी साहित्य साधक का नाम है जो 'साहित्य' में नए प्रयोगों के द्वार पर हमेशा दस्तक देता रहा है। उनकी स्वतंत्र काव्य दृष्टि किसी मतवाद से धूमिल नहीं हुई। उन्होंने मनुष्य-चेतना के बंद द्वारों पर बारम्बार सांकल बजाई है। यह सच है कि कवि अपनी प्रारंभिक काव्य-यात्रा में छायावादी रोमानी संस्पर्शों से अछूते नहीं रहे, किन्तु उन्होंने इस शैली की अपनी संपूर्ण रचनाओं को यह कहते हुए नकार दिया कि 'छायावादी शैली के प्रभाव स्वरूप लिखी कविताओं को मैं कविता नहीं मानता।' अतः कवि उद्घोषणा करता है कि पथ यहाँ से अलग होता है यह जन यहाँ से अलग होता है। उनकी काव्य-यात्रा में प्रगतिवादी एवं प्रयोगवादी पड़ाव भी आए हैं, किन्तु न तो उनका काव्य क्रान्ति के उपरी आवरण के भीतर पनपते क्षयी रोमांस का शिकार हुआ है और न नवीनताओं के अतिआग्रह में उक्ति-वैचित्र्यों की कलाबाजी का। उनके काव्य की ऊर्ध्वगामी और प्रतागामी यात्रा हमें जांगलिकता से सांस्कृतिकता की ओर ले जतीी है। आत्मिक आरोहता एवं मानवीय उदात्तता उनके काव्य को वैष्णवी व्यक्तित्व प्रदान करती है। मनुष्य के भीतर विराजे देवता की पहचान कराने वाला उनका काव्य प्रकृति एवं संस्कृति के विभिन्न उपादानों के माध्यम से मानवीय संबंधों की तलाश करते हुए लघु मानव की गरिमा को प्रतिष्ठित करता है।

'दूसरा सप्तक' में संकलित रचनाओं के अतिरिक्त 'बनपाखी! सुनो!!', 'बोलने दो चीड़ को', 'मेरा समर्पित एकांत', 'अरण्या', 'उत्सवा' आदि में कवि-दृष्टि प्रकृति के रमणीय प्रसन्न चित्रों पर केन्द्रित हुई हैं-जहाँ प्रभात का ग्वाला किरन-धेनुओं को हाँकता है, शिखरों पर किरणों की तुरही बजती है, गेहूँ की बाली कंचन वर्णी हो जाती है और कहीं कबरी हरिण-सी बदलियाँ हैं तो कहीं गीत टाइप करती लहरें। कवि की दृष्टि गहरे आकर्षण के साथ मित्र बाहों-सी उठी बन घाटियों, नारिकेलों पर थमे कजरारे मेघों, सोनजुही सी मोर पंखी चाँदनी, पीले फूले कनेर-चंचल गिलहरी आदि सजीव बिम्बों को उभारने में सफल हुई है। उनकी यह रागात्मकता लोक जीवन और लोक संस्कृति से घुल-मिलकर एक नए उल्लास की सर्जना करती है। 'तुम मेरा मौन हो' की कविताओं की 'कुंतलों की स्वप्निल छाया' और 'नींद सरीखी लाज' प्रणय-क्रीड़ाओं का खुला संकेत देते हुए भी अस्खलित व्यक्तित्व का परिचय देती हैं।

श्रीनरेश मेहता की 'मेरा समर्पित एकांत', 'बोलने दो चीड़ को', 'आखिर समुद्र से तात्पर्य', 'पुरुष' आदि काव्य-संकलन एवं 'महाप्रस्थान', 'प्रवाद पर्व', 'संशय की एक रात' 'शबरी' एवं 'प्रार्थना पुरुष' खण्डकाव्य सामाजिक आशयों को लेकर जनमानस के प्रति समर्पित हैं। ये रचनाएँ अवमूल्यन एवं विघटन की स्थितियों से मानवीय चेतना को स्वच्छन्द कर 'शेष से जुड़' जाने की अदम्य लालसा व्यक्त करती हैं। उनकी 'तीर्थजल', 'मेघमय', 'वनघासें', 'रक्त हस्ताक्षर', 'समय देवता' आदि सशक्त कविताएँ इस संदर्भ में उल्लेख्य बन पड़ी हैं। इस तरह आख्यानक काव्यों के माध्यम से युद्ध की समस्या, राज व्यवस्था की तानाशाही,

अभिव्यक्ति की स्वच्छन्दता और वैचारिक उर्ध्वता को रूपायित करने की चेष्टा की गई है। आधुनिक सन्दर्भों में इन पौराणिक कथाओं के माध्यम से कवि ने समसामयिक प्रसंगों को उभारा है। श्रीनरेश मेहता की सूक्ष्म कलात्मक दृष्टि इसका प्रमाण है कि अपनी काव्ययात्रा के निरन्तर विकास पथ से गुजरते हुए उनकी दृष्टि मानव-सभ्यता, संस्कृति-प्रकृति के उदात्त मूल्यों पर केन्द्रित हुई है। कवि ने धर्म, दर्शन, राजनीति, संस्कृति आदि समस्त पक्षों पर विचार कर मानवीय गरिमा एवं सदाशयता को प्रस्थापित किया है। अन्य शब्दों में कहें तो श्रीनरेश मेहता के काव्य का आधार फलक अत्यन्त विस्तृत है। उसमें प्रकृति, संस्कृति, समाज एवं आधुनिकता को बराबर अभिव्यक्ति मिली है। अतीत एवं परम्परा की प्रासंगिकता एवं यथार्थ सिद्धी उनके खण्डकाव्यों तथा समस्त भारत की आर्ष परम्परा एवं समाज-व्यवस्था का अनुधावन, उनके मुक्त काव्यों की प्रमुख विषय-वस्तु है। इस संदर्भ में डॉ0 रामस्वरूप चतुर्वेदी का मत उल्लेखनीय है-''नरेश मेहता का कृतित्व एक विशेष अर्थ में हिन्दी साहित्य और समूचे भारतीय साहित्य को समृद्ध बनाता है।''

वस्तुतः काव्य के अनेक शिखरों का स्पर्श करने वाले श्रीनरेश मेहता हिन्दी-साहित्य के उच्चकोटि के अभिजात्य कवि हैं। उन्होंने भोगे को आत्मसात् करके अपनी व्यापक संवेदनाओं और गहरी अनुभूतियों को बेबाक अभिव्यक्त किया है। उनकी काव्यभाषा का गांभीर्य प्रयोगधर्मिता के सतहीपन में न खोकर भाषा की शालीनता और अभिव्यक्ति की गरिमा को बरकरार रख सका है। उनके काव्यों-खण्डकाव्यों की भाषा निरन्तर विकसित हुई है अर्थात प्रगतिशील है। 'तुम मेरा मौन हो', 'शबरी', 'प्रार्थना पुरुष', 'देखना, एक दिन', 'मेरा समर्पित एकांत' आदि की भाषा 'उत्सवा', 'अरण्या', 'पुरुष', 'महाप्रस्थान', 'प्रवाद पर्व', 'संशय की एक रात', 'पिछले दिनों नंगे पैरों' एवं 'आखिर समुद्र से तात्पर्य' की वैदिकता, औपनिषदिकता की अपेक्षा सरल एवं सहज है। कवि की 'उत्सवा', 'अरण्या' एवं 'पुरुष' आदि की कविताएँ मंत्रपूत चेतना से चालित हैं। परिणामस्वरूप काव्यभाषा में ऋचात्वता आ गई है। इस प्रकार कविता में वे निरन्तर अपनी चेतना को यथार्थ की व्यावहारिकता में बांधने वाले उपकरणों से मुक्त रखने की कोशिश करते रहे और अंततः कविता की सर्जना कविता के सर्जनात्मक उपादनों से ही करने लगे। प्रयोगों के प्रति अतिआग्रह के कारण उनकी अधिकांश कविताएँ दार्शनिक प्रतीतियाँ प्रतीत होती हैं। वे प्रभावों के दास न होकर लीक से हटकर चलते हैं। निरन्तर नवीन एवं मौलिक प्रयास करते-करते कवि आत्मपरकता की उस पराकाष्ठा पर पहुँचे हैं जहाँ कवि जिस ओर दृष्टि डालते हैं वहाँ फूल ही फूल दृष्टिगत होते हैं।

वस्तुतः एक सजग शिल्पी कवि श्रीनरेश मेहता की अभिव्यक्ति का शैलीय पक्ष प्रबल है। उनकी काव्यभाषा अपना बाह्य विस्तार खोकर अधिक महीन, व्यंजक एवं पारदर्शी हो गई है। कतिपय समीक्षक श्रीनरेश मेहता को प्रयोगों के धुंधलके में भटकते रहने वाला कवि मानते हैं, किन्तु उन्हें यह भी ध्यान रखना होगा कि काव्य-वस्तु अपने पूरे बाँकपन और भंगिमा को चरितार्थ करने के लिए अनुरूप शिल्प की मांग

करती हैं, क्योंकि उस तरह शायद वह अधिक सटीक या कुछ विशेष कह पाती है। श्रीनरेश मेहता की काव्य भाषा इसका प्रमाण है। उनकी रचना संवेदना के चरम उत्प्रेरण का परिणाम है। उनका यथार्थ तत्त्व या भाव जिस भंगिमा में कवि को पकड़ता है, वह अपने सही पल्लवन या रूपायन की पद्धति को अपने साथ लाता है या अनुभव-कोण अपनी सम्यक् संप्रेषिता की सूत्रात्मकता एवं मंत्रात्मकता देखते ही बनती है। इस तरह काव्यभाषा को निरन्तर संस्कारित करते हुए उसमें नई अर्थवत्ता की गहराई प्रदान करने वाले उनके शैलीय उपकरण चयन-संयोजन, विचलन-विपयन, समानान्तरता, अप्रस्तुत-योजना, सादृश्य-योजना, बिम्ब एवं प्रतीक नवीनतम एवं मौलिक हैं जिनका विवेचन-विश्लेषण उनके काव्य की नवीन उद्‌भावनाओं के द्वार खोलते हुए कथ्य एवं शिल्प के सुन्दर सामंजस्य को प्रस्तुत करता है।

क्योंकि श्रीनरेश मेहता एक सामाजिक प्राणी पहले हैं और समाज से उनका गहरा संबंध है, इसलिए समाज की प्रत्येक घटना एवं गतिविधि पर उनकी सूक्ष्म दृष्टि रहना स्वाभाविक है। वह समाज के विभिन्न पक्षों-प्रतिपक्षों पर जब चिन्तन-मनन करते हैं तो उसके अंतस में उठने वाले भाव अभिव्यक्ति के लिए उद्वेलित हो जाते हैं। इस प्रकार उसके रचनामनस् में उठने वाले प्रबल मनोभाव भाषायी अवलंम्बन से मूर्त्त हो उठते हैं। अतः यह अभिव्यक्ति रचनाकार की सामाजिकता है और कला की सम्प्रेषणीयता भी। इस दृष्टि से साहित्य एक भाषिक कला है और साहित्यिक कृति भाषिक कलाकृति। प्रत्येक रचनाकार का व्यक्तित्व एवं जीवन-दृष्टि भिन्न होती है, ऐसे में अभिव्यक्ति की भाषा-शैली में अन्तर आना सहज एवं स्वाभाविक है। क्योंकि शैली अभिव्यंजना का माध्यम है, इसलिए इस माध्यम की भिन्नता एवं मौलिकता से रचनाकार की पहचान हो जाती है। श्रीनरेश मेहता की काव्यभाषा के विवेचन-विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ है कि उनकी काव्यभाषा को अभिव्यंजना शक्ति एवं अर्थवत्ता को मुखर, प्रखर एवं गहराई प्रदान करने वाले विभिन्न शैलीय उपकरणों चयन-संयोजन, विचलन-विपयन, समानान्तरता, अप्रस्तुत-योजना, सादृश्य-योजना, बिम्ब, प्रतीक एवं छन्द का समुचित प्रयोग हुआ है। साहित्यिक प्रमाता को अभिभूत करने वाली उनकी शैली अपने प्रगतिशील दौर से गुजरते हुए अपने चरमोत्कर्ष पर अत्यंत परिमार्जित, गंभीर एवं सुगठित रूप में हमारे समक्ष आई है। उनकी गठी हुई भाषा ने उनकी शैली को जो भाव व्यंजक, सुष्ठ एवं प्रौढ़ रूप प्रदान किया है उसके शैली-वैज्ञानिक अध्ययन से मानव-जाति के लिए साहित्यिक अवदान के विभिन्न नवीन एवं विशिष्ट आयामों को उद्‌घाटित होने की प्रबल संभावना है।

शैली-वैज्ञानिक समीक्षा-पद्धति का आधुनिक युग में महत्त्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि यह अभिव्यक्ति एवं अभिव्यंजना या काव्यभाषा एवं काव्य-कथ्य के सौंदर्य का विवेचन-विश्लेषण में अपेक्षाकृत वस्तुनिष्ठ एवं वैज्ञानिक है। यद्यपि साहित्य के अध्ययन एवं विश्लेषण-विवेचन की अनेक समीक्षा पद्धतियाँ हैं जैसे-समाजशास्त्रीय, काव्यशास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक, रसवादी, भाषा-वैज्ञानिक आदि, तथापि शैली-वैज्ञानिक समीक्षा

भाषा और साहित्य के परस्पर संबंध को अधिक वस्तुनिष्ठता के साथ उद्‌घाटित करने में समर्थ है। क्योंकि इसमें भाषा-वैज्ञानिक समीक्षा और काव्य शास्त्रीय समीक्षा के उपकरणों का संयोजन है। अतः यह काव्य का अधिक तटस्थ एवं वस्तुपरक अध्ययन प्रस्तुत करने में समर्थ है। श्रीनरेश मेहता ने विभिन्न भाषिक स्तरों और विभिन्न शैली-वैज्ञानिक उपकरणों के माध्यम से किस प्रकार अपनी काव्यभाषा को प्रांजल एवं ग्राह्य बनाया है यह प्रस्तुत अध्ययन से अधिक स्पष्ट हुआ है। कवि के शैली पक्ष ने पौराणिक चरित्रों, घटनाओं एवं प्रतीकों की जो नवीन एवं मौलिक व्याख्या की है उनसे कवि के नवीन प्रयोगों का औचित्य पुष्ट होता है। उनके व्यक्तित्व के सभी गुण, उनका स्वभाव-मनोभाव एवं उनकी प्रवृत्ति-दृष्टि उनकी शैली में पूरी तरह विद्यमान है। व्यक्तित्व की विशिष्टता एवं असंगता के अनुरूप उनकी भाषा के विभिन्न शैली उपकरणों चयन, संयोजन, विचलन-विपथन, समानान्तरता, अप्रस्तुत-योजना, सादृश्य-विधान, बिम्ब-विधान, प्रतीक-विधान एवं छन्द-योजना में विभिन्न भाषिक स्तरों पर ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य, प्रोक्ति एवं अर्थ आदि में स्पष्ट दृष्टिगत होते हैं। इन उपकरणों व स्तरों के विवेचन-विश्लेषण से यह स्पष्ट हो सका है कि काव्यभाषा ने सामान्य भाषा से कहाँ और कितना अतिक्रमण किया है तथा कहाँ-कहाँ अनुभूति अपनी पराकाष्ठा पर पहुँची है और कहाँ-कहाँ रसास्वादन में विघ्न पड़ा है।

श्रीनरेश मेहता की काव्यभाषा का सबसे प्रमुख गुण है चयन एवं संयोजन। कथ्य की आंतरिक एवं बाह्य ध्वन्यात्मकता के लिए उनके काव्य में चयन-संयोजन के नानाविध प्रकार दृष्टिगत हुए हैं। ध्वनि-चयन के अन्तर्गत कवि ने ध्वनि वाले शब्दों का प्रयोग करते हुए ध्वन्यात्मक एवं नादात्मक प्रभाव से अर्थ को अधिक गहरा दिया है। खिल-खिल, किन-किन, झिम-झिम, तड़-तड़-तड़-तड़ाक जैसे ध्वन्यात्मक शब्दों के अनेक उदाहरण इस बात के प्रमाण हैं कि कवि-अनुभूति के अनुरूप चयनित विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ काव्यभाषा में नाद-सौंदर्य की प्रभावपूर्ण सृष्टि करती है। चयन में श्रीनरेश मेहता ने केवल ध्वनि को ही आधार माना हो, ऐसी बात नहीं है वरन् उन्होंने अर्थ के आधार पर भी शब्दों का चयन किया है। राम के साथ 'दाशरथी' विशेषण का चयन साभिप्राय भी है और अर्थ की सूक्ष्म परतों को खोलने वाला भी। कहीं दो-दो संज्ञा शब्दों का एक साथ चयन जैसे 'अपर्णा-पार्वती' उल्लेखनीय बन पड़ा है। राम केवल राम नहीं बल्कि दाशरथी राम हैं। दाशरथी राम संस्कार से जड़ीभूत व्यक्तित्व है, इतिहास से सम्बद्ध व्यक्तित्व है, युवराज राम है जो चौदह वर्ष बाद दाशरथी परम्परा का वाहक होगा। इसी प्रकार पर्वत पर जीवन यापन की बाधाओं को उद्‌घाटित करने वाला 'अपर्णा' शब्द भी अपने आप में विशिष्ट है। इसके चयन से जहाँ कवि ने पार्वती द्वारा शिव-प्राप्ति के लिए अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति के आगे पत्तों के सहारे जीवन यापन करना भी सहज स्वीकारने का बोध करा दिया है। उन्होंने युग की सजीव अभिव्यक्ति के संशय, प्रत्यंचा, बटन, वनघास, युद्ध, रक्त, आस्था, साधारण, लघुमानव, क्षण, अँधेरा आदि युगीन प्रवृत्ति के द्योतक शब्दों का सटीक चयन किया

है। इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं एक साथ शब्दों के कई पर्यायों के द्वारा कवि ने छन्दपूर्ति की है तो कहीं ध्वनि साम्य वाले, व्युत्पत्तिपरक एवं प्रकरण की उपयुक्तता वाले शब्दों के चयन से अभिव्यक्ति को विशिष्ट बनाया है। उनका काव्य तत्सम् शब्दों का अक्षय कोश है और विशेषकर आर्ष शब्दों का प्रयोग उन्मुकत भाव से हुआ है। 'उपनिषद्' एवं 'वैष्णवता' उनके सर्वाधिक प्रिय शब्द कहे जा सकते हैं। क्योंकि कवि भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की पुनः प्रतिष्ठा करने का दम भरते हैं, इसलिए आधुनिक युग में तद्भव एवं विदेशी जैसे उर्दू, अरबी, फारसी एवं अंग्रेजी शब्दों के बीच संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग अपने आप में विरल है। प्रकरण की उपयुक्तता हेतु बंगलाभाषा के शब्द, जैसे-बलदेवो, 'घोषदेवो', 'सत्कारों', 'जानी हमी कवि नाही' आदि का एवं अवधी-ब्रज भाषा के शब्दों का चयन काव्यभाषा को सशक्त बनाता है।

भावों-विचारों की बेबाक अभिव्यक्ति के निमित्त संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम, समस्त, असमस्त आदि रूपों का चयन-संयोजन वस्तु-स्थिति के अनुरूप बन पड़ा है। चिंतन की गहराई एवं अभिव्यक्ति की क्षमता का परिचय उनके वाक्य-चयन से सहज हो जाता है। उन्होंने प्रायः उदगारवाचक, विस्मयादिवाचक एवं मिश्र वाक्यों का चयन अधिक किया है। खण्डकाव्यों में नाट्यतत्त्वों के अनुरूप कहीं लम्बे वाक्य एवं कहीं एक शब्दीय वाक्यों का चयन अर्थ-संप्रेषण के अनुरूप है। इसी भाँति प्रोक्ति एवं अर्थ स्तर के चयन पर कवि ने समानार्थी, विरोधार्थी, लघु-दीर्घ एवं संलापी-एकालापी प्रोक्तियों का चयन किया है। अर्थीय चयन में कवि ने विशेष सतर्कता का परिचय दिया है। उन्होंने प्रमुखतः व्यंजनार्थ का चयन करते हुए पौराणिक शब्दों की नवीन अर्थोदभावनाएँ की है। काव्यों, खण्डकाव्यों के शीर्षक-उपशीर्षक एवं उनमें वर्णित चरित्र एवं घटनाएँ वैदिक कालीन होती हुई भी आधुनिक समाज की विद्रूपताओं पर कटाक्ष करती हैं। यह सब श्रीनरेश मेहता के अर्थीय चयन का ही प्रतिफल है। वस्तुतः चयन-संयोजन उनकी काव्य भाषा का प्रमुख शैलीय उपकरण है।

विचलन एवं विपथन भी श्रीनरेश मेहता की काव्यभाषा का प्राण तत्त्व है। ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य, अर्थ एवं प्रोक्ति स्तर पर होने वाला विचलन ही कवि को अपवादों में घेरे रहता है। उनके ध्वनि स्तरीय विचलन के उदाहरण अपेक्षाकृत कम है। शब्दों की ध्वनियों का विस्तार अभिव्यंजना को विशेष समृद्ध नहीं करता। पृथ्वी के लिए 'पृथिवी', देवी के लिए 'देवि', 'बिनयी', 'दीठि' आदि ध्वनि-विचलन के उदाहरण विशेष आकर्षित नहीं करते। इनकी अपेक्षा 'संशय की एक रात' में 'स्थिर' शब्द 'थिर' रूप पर्याप्त आकर्षण का केन्द्र रहा है जो कि अधिक सार्थक है। विचलन के प्रायः सभी रूप राम के उस कथन में सहज ही दृष्टिगत हुए हैं जहाँ राम छाया स्त्रीलिंग को 'ओ रात्रि की प्रेतात्मा' के साथ 'ओ छलने' पुल्लिग का प्रयोग करता है। इस प्रकार विचलन से विपथन पर आता हुआ कवि राम की छाया के प्रति अज्ञान की सटीक व्यंजना कर सका है। इसी प्रकार सूर्य के लिए 'सूर्यों' आकाश के लिए 'आकाशों', पृथ्वी के लिए 'पृथिवियों' वचनगत विचलन-विपथन के सटीक उदाहरण हैं। 'इन्हीं आकाशों में थिर कर दूँगा' काव्य-पंक्ति प्रेतात्मा की व्यापक

सीमाओं के साथ-साथ राम की आवेशमयी स्थिति में प्रेतात्मा को झटके के साथ शक्ति विहीन कर देने की क्षमता का प्रभावी चित्रण अपने विचलन-विपथन के बल पर कर सकी है। प्रोक्तीय विचलन-विपथन में कवि सिद्धहस्त हैं। कवि एक कथन के भीतर दूसरे उपदेशात्मक कथन को सहज ही संयोजित करने में निपुण हैं। प्रसंग का समुचित उल्लेख कर देने के पश्चात् कवि सूक्तिमय प्रोक्तियों का समावेश कर अर्थ को अधिक समाज सापेक्ष एवं गहराई प्रदान कर देता है। 'महाप्रस्थान' में युधिष्ठिर राज्य के संचालन के लिए धर्म को अंकुश की अपेक्षा उचित मानता है, किन्तु अपने अर्थ को जिस प्रोक्ति से स्पष्ट करता है उसके अंत में सूक्तिमयप्रोक्ति सहज ही प्रयुक्त हुई है। युधिष्ठिर का कथन है कि समाज धर्म के नियमों से चलता है, इसलिए समाज को रहने योग्य बनाए रखने हेतु धर्म एवं विचार को स्वतंत्र रहने दो। यहाँ तक तो ठीक है, किन्तु प्रोक्ति अधूरी है प्रोक्ति का अंत विचलन के साथ होता है कि 'किसी भी व्यक्ति को इतना प्रतिष्ठापित मत करो कि शेष सबके लिए वह अलंघ्य विन्ध्याचल हो जाए।' किन्तु इस विचलन से जिस अर्थ की व्यंजना हुई है वह विचलन के बिना अप्रभावी रह जाती है। इस प्रकार उदाहरण श्रीनरेश मेहता के काव्य में भरे पड़े हैं। ये उदाहरण स्पष्ट इंगित करते हैं कि कवि के भावों की प्रबलता एवं सघनता किस प्रकार अभिव्यक्ति को दरेरा देकर विशिष्ट बना रही है। अर्थ-स्तरीय विचलन-विपथन के द्वारा कवि ने सामान्य से प्रतीत होने वाले शब्दों में नवीन अर्थों की उद्‌भावनाएँ करते हुए काव्य को समाज सापेक्ष बनाते हुए उसके लोकमांगलिक स्वरूप को बनाए रखने में विशेष योगदान दिया है। उनके यहाँ 'पेड़' पेड़ न होकर ऋषि समान है, 'फूल' फूल न होकर मंत्र है। इस प्रकार प्रकृति व संस्कृति के लगभग सभी उपादानों में कवि ने मौलिक एवं नवीन अर्थों की व्यंजना अपनी विचलन-विपथन शैली के बल पर करते हुए अभिव्यक्ति के सामान्य रूप में ही विशिष्टता एवं व्यापकता का समाहार किया है। कह सकते हैं कि कवि की संवेदनाओं के सम्मुख सामान्य भाषा के नियम किस प्रकार नतमस्तक खड़े हो जाते हैं और कवि के शिल्पी हाथों से किस प्रकार नवीन रूप धारण करने के लिए भाषा के सभी घटक किस प्रकार तत्पर रहते हैं यह श्रीनरेश मेहता की काव्यभाषा के विचलन-विपथन के विवेचन-विश्लेषण से सहज ही हो जाता है। कवि इसके लिए भले ही विवादित रहा हो, किन्तु इसके बल पर ही उन्होंने नवीन शब्दों का निर्माण करते हुए अभिव्यक्ति के माध्यम भाषा को परिष्कृत एवं समृद्ध किया है।

श्रीनरेश मेहता के काव्य में चयन-संयोजन, विचलन-विपथन के साथ-साथ समानान्तरता को भी समुचित स्थान मिला है। एक समान या विरोधी ध्वनियों, शब्दों, रूपों, वाक्यों, प्रोक्तियों एवं अर्थों का बार-बार प्रयोग करते हुए कवि ने वर्णित भाव या विचार को चिरंतन बनाने का स्तुत्य प्रयास किया है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि कहीं कोई-न-कोई भाव या विचार रचनामनस् को इतने गहरे से पकड़ लेता है कि उसकी बार-बार की अभिव्यक्ति भी अपर्याप्त प्रतीत होती है। ध्वनि-समानान्तरता के असंख्य प्रयोग काव्य

भाषा में नादात्मकता, प्रवाहमयता एवं संगीतात्मका का गुण भरते हैं। 'अरण्या' की 'देवीय पुकार' कविता का 'खिलखिलाते मुख वाले' अंश, 'प्रवाद पर्व' का 'ध्रुव से ध्रुव तक धू-धू करती यह कर्म की कृत्या' एवं 'केवल टकराते हैं, लौट-लौटकर टकराते हैं और टूटते हैं, टूटते ही चले जाते हैं', 'शबरी' का 'फूलों में कल-कल बहती कोकिल बन कुंजों-कुंजों', 'आखिर समुद्र से तात्पर्य' की 'शक्ति के रूप', 'सिर्फ हाथ', 'परिभाषा' आदि अनेक कविताओं में ध्वनि समानान्ता के उदाहरण काव्य को गति एवं लय प्रदान करते हैं। उनके काव्य में शब्द-स्तर की समानान्तरता के विपुल प्रयोग दृष्टिगत होते हैं। 'कोटि-कोटि', 'जल ही जल', 'जल ही जल की आ रही ध्वनियाँ', 'अँधेरे से अँधेरे में, अँधेरे तक', 'तुम कहाँ हो', 'यह महालीला', 'यह विधान', 'यह खेल', 'यह प्रारब्ध', 'मंगल-अमंगल', 'मेरे रोम-रोम', 'अरण्या' की 'मनुष्यता' एवं 'आविर्भाव' कविता में 'किन-किन', 'कहाँ-कहाँ', 'फल-फूल', 'रोज-रोज' कविता में 'घूम-घूम', छोटा-छोटा आदि शब्द उल्लेखनीय रहे हैं। वाक्य स्तर पर कवि ने वाक्य के लगभग सभी भेदों-उपभेदों का समानान्तर प्रयोग करते हुए अर्थ को गहराया है। प्रश्नवाचक एवं विस्मयादिवाचक वाक्यों का समानान्तर प्रयोग अधिक हुआ है। कहीं-कहीं आज्ञावाचक एवं इच्छावाचक वाक्यों का भी प्रयोग हुआ है। ये सारी समानान्तरताएँ अभिव्यक्ति को संगीतात्मकता प्रदान करती हैं। आधुनिक मनुष्य किस प्रकार अपनी सांस्कृतिक गरिमा एवं सभ्यता से विमुख हो गया है। यही मूलाधार कवि को बार-बार प्रश्न करने एवं सचेत करते रहने के लिए प्रेरित करता है। 'मत जगाना, अँधेरे को मत जगाना', 'तुम कहाँ, तुम कहाँ हो' आदि वाक्य इसके प्रमाण हैं। प्रोक्तीय समानान्तरता के बल पर कवि ने काव्य की संप्रेषणीयता एवं अर्थवत्ता में क्या प्रभाव उत्पन्न किया है इसका बोध उनके काव्य में आवृत्त विभिन्न समान एवं विरोधी प्रोक्तियों से सहज ही हो जाता है। 'दो-सत्य', दो संकल्प, दो-दो आस्थाएँ, प्रोक्ति दो बार, 'मत जगाना, अँधेरे को मत जगाना' प्रोक्ति भी दो बार, 'रावण से बड़ा इतिहास-पुरुष कोई था लक्ष्मण' प्रोक्ति छह बार और 'मनुष्य के बोलने का अर्थ जानते हो' प्रोक्ति चार बार समानान्तर प्रयुक्त हुई है। इस प्रकार के असंख्य उदाहरण यह प्रमाणित करते हैं कि कवि वर्णित मूल कथ्य या भाव को मुखर करने का अभिलाषी है। इसी प्रकार अर्थीय समानान्तरता के कारण काव्य में आन्तरिक संगीतात्मकता तो आई ही है, किन्तु इससे बड़ा कलात्मक सौंदर्य अर्थ की अनेक छवियों को साकार करने में है। 'व्यक्ति', 'राज पुरुष', 'इतिहास पुरुष पुराण पुरुष', एवं 'स्त्री', 'माता', 'संबंध' एवं सीता, 'पत्नी' 'भार्या', 'पुत्री' आदि अर्थीय समानान्तरता के सशक्त प्रयोग काव्य में गांभीर्य ला देते हैं। अर्थीय समानान्तरता का सबसे जटिल उदाहरण वहाँ मिलता है जहाँ कवि अपनी शैली-कौशल के बल पर अभिव्यक्ति में एक साथ कई अर्थों को व्यक्त करता है, जिसे भारतीय साहित्य शास्त्र में श्लेष की संज्ञा दी जाती है। 'फूल' अन्तर एवं बाहर दोनों का होता है। मनुष्य के उदात्त भाव एवं विचार भी फूल हैं, कविता भी फूल है और फूल तो फूल है ही। इस प्रकार एक साथ अनेक व्यंजनाएँ करने वाले ये अर्थ स्तरीय

समानान्तर प्रयोग काव्य को नई गरिमा प्रदान करते हैं। वस्तुतः श्रीनरेश मेहता की काव्यभाषा के विविध समानान्तर प्रकार कथ्य को बेबाक एवं मनोग्राह्य बनाने में सक्षम सिद्ध हुए हैं।

श्रीनरेश मेहता की मूर्त विधायिनी क्षमता ने काव्यभाषा को अप्रस्तुत-योजना एवं सादृश्य-विधान की मेखला प्रदान की है। यह काव्यभाषा का मेरूदण्ड है। प्रस्तुत विषय की प्रभावी एवं सटीक अभिव्यक्ति के लिए कवि ने मूर्त-अमूर्त अप्रस्तुतों की जो योजना की है उससे कथ्य अधिक स्पष्ट एवं अभिव्यक्ति सशक्त हुई है। नए विशेषणों-क्रियाविशेषणों के निर्माण का अत्यन्त समर्थ यह शैलीय उपकरण श्रीनरेश मेहता के काव्य में व्यापक स्तर पर प्रयुक्त हुआ है। मूर्त प्रस्तुत के लिए मूर्त एवं अमूर्त अप्रस्तुत और अमूर्त के लिए मूर्त एवं अमूर्त अप्रस्तुतों की योजना प्रस्तुत-अप्रस्तुत के परस्पर अवलंबन द्वारा नवीन अर्थ की व्यंजना करने में उपयोगी सिद्ध हुई है। 'झरने' मूर्त प्रस्तुत के लिए ग्रामीण बालक मूर्त अप्रस्तुत की योजना सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, नागरिक भाषा को लोक स्वाभावी बनाती है। सितार के तार के लिए बच्चों की, पहाड़ों के लिए निकोलस रोरिक के चित्र के विषय की अमूर्त योजना, प्रेमिका मूर्त के लिए सुगंध अमूर्त की योजना, कामनाओं अमूर्त के लिए पक्षियों की मूर्त योजना, परिस्थितियों अमूर्त के लिए धेनु की मूर्त योजना और साँसों के लिए चीटियों की, गन्धर्व व्यक्तिव अमूर्त के लिए भैरवी राग की अमूर्त योजना, हवाओं के लिए कोलाहलों की, स्मृति के लिए रजनीगंधा की एवं दुःख के लिए प्रभु की अमूर्त योजना यह प्रामाणित करती है कि कवि के भावों के साथ-साथ उनकी कल्पनाशीलता का विस्तार भी अपार है। कहीं-कहीं तो कवि एक प्रस्तुत के लिए अनेकानेक मूर्त-अमूर्त अप्रस्तुतों की मालोपमा सी प्रस्तुत करने लगता है। 'समय देवता' एवं 'पिछले दिनों नंगे पैरों' की अधिकांश कविताएँ इसका प्रमाण हैं।

सादृश्य-विधान के अन्तर्गत कवि ने सजीव-निर्जीव उपादानों के रूप आकार, प्रभाव एवं क्रिया आदि की मनोरम प्रस्तुति के लिए तत्संबंधित विभिन्न उपादानों का सादृश्य-विधान किया है। इनसे वर्णित विषय वस्तु अधिक मनोज्ञ एवं सुष्ठु बन पड़ी हैं। उनके रूप-सादृश्य-विधान में प्रकृति के नानाविध अवयवों, रूपों का प्रभावी प्रयोग दृष्टिगत हुआ है। सन्ध्या के समय पश्चिमी आकाश की गेरुई लहरियाँ कबरी हरिण-सी प्रतीत होती हैं जो प्राकृतिक दृश्य की पल-प्रतिपल बदलती छवि की सजीव व्यंजना करता है। उपत्यकाओं के लिए देव-अपसराओं के परिधान का सादृश्य-विधान, नेत्रों के लिए सुंदर अभिराम की सृष्टि करता है। प्रिया के रूप-लावण्य हेतु सेब की लालिमा प्रेम की ऊष्मता की सूक्ष्म व्यंजना करने में सहायक है। 'ईसाई भिक्षुणी-सी धूप', 'झील सरीखा शबरी का रूप', 'संन्यासी के वस्त्र जैसा आकाश', 'दैत्याकार आकृतियों वाला मांस भक्षी वनस्पतियों का विस्तार', 'फूल-मंत्र एवं चींटी' का आकार, अत्यधिक दूर से चींटियों-सा प्रतीत होने वाला ऊँटों का काफिला कवि के काव्य की संप्रेषण शक्ति में अदभुत एवं नैसर्गिक चमत्कार उत्पन्न कर देता है। इसी प्रकार उनका प्रभाव एवं क्रिया सादृश्य-विधान भी काव्य की बोधगम्य क्षमता में गुणात्मक वृद्धि करता

है। माता के प्रभावालोक में पृथ्वी के प्रति उदात्त भाव रखने वाले कवि 'अरण्या' एवं 'उत्सवा' में उसके विभिन्न रूपों की भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रस्तुतियाँ करते हैं। कवि के लिए नए दिन का उतना ही महत्त्व है जितना की मित्र का है। दिन के प्रति मित्र जैसा आत्मिक राग कवि के जीवन-प्रेम का भी व्यंजक है। 'खाली तूणीर जैसा व्यक्ति', 'धर्मग्रंथ के चरित सरीखा गाँधी' और 'कीचड़ में खिले कमल की भाँति शबरी' का व्यक्तित्व आदि असंख्य उदाहरण अपनी प्रभाव साम्यता के बल पर कथ्य को नई अर्थवत्ता एवं भाषा को प्रांजल बनाते हैं। किरणों का सुबह-सुबह पृथ्वी पर सशंक मृगों एवं नववधू की तरह चलकर आना, ऋतुओं की भाँति प्रेमिका का आना-जाना, क्रोध एवं आवेश में प्रकंपित पताका के समान तर्जनी का हिलना, प्रातः कालीन आकाश में महिलाओं की भाँति पक्षियों का कोलाहल करना आदि अनेकानेक क्रिया साम्यगत उदाहरण काव्य को मनोज्ञ बनाते हैं। अतः श्रीनरेश मेहता की कल्पना शक्ति ने असंख्य सूक्ष्म-स्थूल प्रस्तुतों से एवं सादृश्य-विधान से जो बेबाक अभिव्यक्ति की है उससे काव्यभाषा के अभिव्यंजना शिल्प में नवीनता एवं ताजगी का समावेश हुआ है।

बिम्बात्मकता काव्यभाषा का वह प्रमुख गुण है जो अनुभूत भावों को शब्दों-चित्रों के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए काव्य में दृश्य, श्रव्य, स्पर्श आस्वाद्य एवं घ्राणत्व शक्ति का संचार करता है। श्रीनरेश मेहता का काव्य उनके कथानानुसार कि 'मैं तो अपनी बात बिम्बों में ही कह पाता हूँ।' बिम्बों का पर्याय है। उनकी ऐसी कविताएँ अल्प मात्रा में मिलेगी, जिनमें कोई बिम्ब न हो और बिम्बों में ताजगी एवं ऐन्द्रिय कल्पना का अनूठा सौंदर्य न हो। उनके काव्य में फाल्गुन या वसंत संबंधी कविताओं में कोई-न-कोई नया एवं मौलिक बिम्ब है जो नई भंगिमा के कारण और निखर उठता है। 'बोलने दो चीड़ को' में 'एक तितली', 'एक प्रयोग' एवं 'दिनांत का राजभट' जैसी कविताओं में उत्कृष्ट बिम्बों की सर्जना हुई है। 'समय देवता' में विभिन्न देशों के ऐसे सांद्र बिम्ब हैं कि उनसे देश की संपूर्ण रूपाकृति को काव्यात्मकता मिल जाती है। 'तुम क्यों हिलातीं ताल-जल बादल काँप जाते हैं।' दो पंक्तियों में निर्मित यह बिम्ब के भीतर बिम्ब प्रेमी के हदय की अनूठी अपालंभी अभिव्यक्ति है। ताल-जल हिलने से उसका प्राकृतिक परमराग खंडित हुआ है, परंतु इसका हेतु प्रेयसी है, इसलिए वह उसे न रोककर अपनी खिन्नता को ही शिष्ट बनाते हुए दोहरी पीड़ा झेलता है। इस प्रकार कथ्य की सूक्ष्म व्यंजना को बहुत ही सहजता से मूर्त करने वाले ऐसे असंख्य बिम्ब नरेश मेहता के काव्य की धरोहर हैं। 'अनाम साधारणजन द्वारा द्वार पर साँकल बजाना', 'रावण का समुद्रीघोष', महाप्रस्थान के समय हिमाँधियों की साँय-साँय, पीपल के पत्तों का कँप-कँपाना, चश्में के नीचे दबे पन्ने का खड़खड़ाना आदि न जाने कितने नाद बिम्ब कविता में ध्वन्यात्मकता के सहारे काव्य सौंदर्य उत्पन्न करते हैं। उनके बिम्बों में घ्राण, आस्वाद्य एवं स्पर्श बिम्बों की अपेक्षा दृश्य एवं नाद बिम्बों की सर्जना अधिक हुई हैं, किन्तु अल्प मात्रा में उभरे घ्राण, आस्वाद्य एवं स्पर्श बिम्बों ने काव्य की ऐन्द्रियक बोध क्षमता में पर्याप्त संवर्धन

किया है। वस्तुतः अनुभूति की अभिव्यक्ति के समय प्रभावी एवं सशक्त बिम्बों की उदभावना से काव्य की भावग्रहण या साधारणीकरण की प्रक्रिया सहज बन पड़ी है। इनसे काव्यभाषा में भी चारुत्व आया है। संश्लिष्ट बिम्ब भाषा की समाहार शक्ति के द्योतक हैं जो यत्र-तत्र सहज ही निर्मित हो गए हैं।

प्रतीकों के प्रयोग ने भी श्रीनरेश मेहता की काव्यभाषा को नई अर्थवत्ता एवं संप्रेषण क्षमता प्रदान की है। उनके काव्य में प्रयुक्त प्रतीक अर्थ के सागर को गागर में समेटने का कार्य करते हैं। अपने गंभीर स्वभाव एवं कथ्य के अनुरूप उनके प्रतीकों में भी वैचारिकता प्रबल है। क्योंकि श्रीनरेश मेहता वैदिक कवियों की श्रेणी में आते हैं, इसलिए उनके काव्य में पौराणिक प्रतीकों की भरमार है। 'महाप्रस्थान', 'प्रवादपर्व', 'संशय की एक रात' एवं 'शबरी' खण्डकाव्यों में युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रौपदी, अश्वत्थामा, धृतराष्ट्र, राम, लक्ष्मण, सीता, रावण, हनुमान, नल-नील, जटायु, छाया, दशरथ, शबरी, ऋषि मतंग आदि पौराणिक प्रतीक अवश्य हैं, किन्तु उनसे कवि ने समकालीन चेतना को मुखर बनाया है। यही श्रीनरेश के काव्य की विशेषता है कि उन्होंने इन प्रतीकों की नई व्याख्याएँ कर इनकी कालावधि को समाप्त करते हुए वर्तमान समाज की विसंगतियों को बेबाक अभिव्यक्त किया है। वस्तुतः एकाधिक अर्थों की एक साथ व्यंजना करने वाले उनके प्रतीक वर्णित संवेदनाओं को कलात्मक स्वरूप प्रदान करने में पर्याप्त सक्षम रहे हैं। कवि ने फूल, वृक्ष, वनघासें, हिमपात, भोजपत्र, कुहरा, नदी, समुद्र, बरगद, पीपल, स्वास्तिक, काग-ग्रास, तिलक, कपिला, उत्सव, भवसागर, पाँसे, रत्नजड़ित सिंहासन, तख्तेताऊस, गिद्ध, भेड़िया, सिंह-सूर्य, मृत्तिका, पृथ्वी, अरण्य, यज्ञ, शिखण्डी, समूह, पतझड़, द्वीप, पाण्डुलिपि आदि सांस्कृतिक, प्राकृतिक एवं राजनीतिक प्रतीकों ने अर्थ में अद्‌भुत सौंदर्य की सृष्टि की है। इन प्रतीकों का संदर्भगत प्रयोग कविता में मंत्र-शक्ति को समो देता है। सांस्कृतिक शब्दों की अपनी अर्थवत्ता एवं प्रतीकात्मकता से आज के पाठक का संबंध टूट-सा गया था, किन्तु श्रीनरेश मेहता ने उन प्रतीकों का अधुनातन अर्थों में प्रयोग करते हुए उस संबंध को पुनः स्थापित किया है। अतः बाह्य रूप से आर्ष प्रतीत होने वाले प्रतीक अपने अन्दर आधुनिक युग की अनगिनत छवियों को समाए हुए हैं। इस प्रकार के प्रयोग ही कवि को अपने समकालीनों से अलग एवं अपांक्तेय करते हैं।

श्रीनरेश मेहता का काव्य में छन्दों की रचना पिंगलशास्त्र के नियमों की अपेक्षा मुक्त अधिक रही है। यह ठीक ही है कि अभिव्यंजना अपना रूप भी साथ लाती है, किन्तु जहाँ रचनाकार अभिव्यंजना को सायास रूप प्रदान करने का प्रयत्न करता है काव्य में सरलता अधिक मुखर हुई है। 'प्रार्थना पुरुष' एवं 'शबरी' खण्डकाव्यों में प्रयुक्त छन्द इसका प्रमाण हैं। मूलतः कवि का उद्देश्य भावों की बेबाक व्यंजना करना है इसलिए उनको मूर्त्त रूप प्रदान करने के लिए शास्त्रीय-अशास्त्रीय छन्दों की रचना स्वतः ही हो गई है। उनके मुक्त छन्द आर्ट और रीडिंग से परिपूर्ण हैं। कुछ लोक-शैली में लिखी कविताओं में गीतिमयता का सा आनन्द आता है। उनके छन्दों की कोई पंक्ति मात्र एक शब्द की है तो कोई अत्यधिक लम्बी है, किन्तु उनमें

भावों की अनुतान, आरोह-अवरोह आन्तरिक लय की सृष्टि करने में अभूतपूर्व योग देता है। भावों के प्रवाह में कवि ने चरणों को खुला छोड़ दिया है। 'अरण्या', 'उत्सवा', 'पिछले दिनों नंगे पैरों', 'महाप्रस्थान', 'प्रवाद पर्व', 'आखिर समुद्र से तात्पर्य' इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है। यह सब भावों की सघनता एवं नैरन्तर्य के कारण हुआ है। कवि के भाव टुकड़ों-टुकड़ों में नहीं आते वरन् अविरल झरने की भाँति झरते हैं। इसीलिए कहीं-कहीं छन्दों में गद्यात्मकता का आभास होने लगता है, किन्तु उनकी सामासिकता एवं कथ्य की प्रबलता काव्यरूप को स्खलित होने से बचा लेती है। उन्होंने 14 मात्रा वाले 'हाकलि' एवं 16-14 मात्रा वाले 'सखी' छन्द एवं मत्तसमक एवं सखी के मिश्र रूप का प्रयोग भी किया है। मिश्रित छन्दों में चंद्रमायनी, पद्धति, चौपाई एवं चन्द्रमणि का एक साथ प्रयोग उनका गीतात्मक कविताओं में सहज बन पड़ा है। वर्णिक छन्दों में 'श्री', 'रमणी', 'प्रिया' आदि के साथ प्रस्तुत हुए हैं। वर्णिक छन्दों की मात्रा कम ही दृष्टिगत होती है। वस्तुतः अपने उन्मुक्त स्वभाव के अनुरूप श्रीनरेश मेहता ने अपने कथ्य की अभिव्यंजना जिस शैली में की है उससे उनका कथ्य छान्दसिक दृष्टि से मुक्त विधायनी कल्पना का आगार रहा है। उनके छन्दों के लघु-दीर्घ चरण कहीं रुकते हैं तो कहीं तीव्र भावावेग के साथ बह चलते हैं। छन्दों की भावानुकूल गति-यति काव्यार्थ से संचालित है न कि पिंगलशास्त्र के नियमों से। इस प्रकार छन्दों की अनुप्रास-अन्त्यानुप्रास, पदमैत्री कवि के गूढार्थ की सुन्दर प्रतीति कराती है। उसके बाह्य रूप को देखकर सहृदय अवश्य ठिठक जाता है, किन्तु जब वह शनैः-शनैः उसके भीतर प्रवेश करता है तो अद्‌भुत संगीत लहरियाँ सुनाई पड़ती हैं।

अंततः कहना न होगा कि श्रीनरेश मेहता की काव्यभाषा अपने प्रारंभिक दौर में पर्याप्त विवादास्पद अवश्य रही, किन्तु उसका पर्यवसन निर्वावाद रहा है। उनकी भाषा के अभिव्यक्ति पक्षों में चमत्कार प्रदर्शन की अपेक्षा भीतरी बेचैनी की छटपटाहट थी। कवि ने ऐसी भाषा की सर्जना की जिसमें उसकी अनुभूति, विचार एवं कल्पना ठीक से खुलने-खिलने के लिए कोई दबाव न रहे। अपनी इस भाषा के संबंध में कवि ने अपने काव्यों की भूमिका में जो कहा है वह अंदर कविताओं में भी स्पष्ट हुआ है। अपने द्वंद्वात्मक स्वभाव एवं विकास में उन्होंने जिस भाषा की सर्जना की उसमें नया भावबोध, नया अंतर्द्वन्द्व और विकलता दृष्टिगत होती है। कवि ने विचित्र लगने वाले शब्दों का भी चयन किया और विचलन-विपथन द्वारा विचित्र लगने वाले शब्द भी गढ़े। उन्होंने अपनी काव्यभाषा में सांस्कृतिक एवं वैदिक शब्दों के साथ मालवा के, बाँगला के मराठी के और टेशोकोटा जैसे जापानी के शब्दों का चयन-संयोजन भी किया और कुछ शब्दों की वर्तनी में विचलन भी किया। क्रियापदों में संस्कृत के बेमेल और निषिद्ध प्रत्यय जोड़ना, व्याकरण व भाषा के मानकीकरण की अवहेलना करना, ह्रस्व-दीर्घ के स्वविवेक को भाषा पर प्रयुक्त करना, शब्दों, वाक्यों के निजी रूप गढ़ना, भाषा के संयम को स्फीति के उत्सव से तोड़ना, श्रीनरेश मेहता का स्वभाव रहा है। 'नील आकाशे खिंचे है', 'जल धुले नव क्षितिज उजियारे', 'इतिहास' को 'इतीहास' रूप में धूमाग्नि को धूमाग्न रूप में प्रयोग करना

उनकी काव्यभाषा के अनोखे प्रयोगों में से हैं। भाषा के अनेकानेक पर्यायवाचियों, प्रत्ययों, उपसर्गों, वि समासों के रहते शब्द-रचना एवं संयोजना की अपार संभावनाएँ उनके काव्य में अवलोकनीय हैं। व बंगलादि भाषा के अपवादित प्रयोग, नवीनता की उत्कट चेतना एवं पाठकीय संवाद से हटाकर आत्मसंव प्रकृति और समय से संवाद के अंतर्हित कारण से किए हैं, किन्तु प्रयोग की यह अदम्य जिजीविषा प्रा कुछ ही समय रही, बाद में स्वयं कवि ने ही इसे त्याग दिया है।

वस्तुतः श्रीनरेश मेहता की भाषा के दो प्रकार हमारे सम्मुख आए हैं, एक तो वह जिसमें कवि ओजस्वी, प्रबल एवं उत्प्रेरक मनोवेगों को उनके समकक्ष भाषा के रूप में प्रकट करता है, दूसरा वह वह कोमलकांत, विनयी भाषा में व्यक्त करता है। अधिक अटपटे प्रयोगों वाली प्रथम अभिव्यक्ति की उसका दूसरा रूप अधिक प्रभावी है। इसमें विरोधों के सामंजस्य वाली काव्य श्रेष्ठता थोड़ी जटिल अव किन्तु उसमें शब्दों की निगूढ, सांस्कृतिक सत्ता का जो अंतःसंचार है वह उन्हें नवीन अर्थ एवं संस्कार करता है। इस प्रकार उन्होंने आर्ष शब्दावली को अपनी प्रतिभा के बल पर आधुनिक सर्जना की भाषा का जो प्रयास किया उससे हिन्दी को एक नई काव्यभाषा मिली।

.....